भारतीय लोकतंत्र : बढ़ते कदम

संजय लोढ़ा

किसी भी लेख का शीर्षक तय करना लेखक के लिए कठिन कार्य होता है। समस्या यह होती है कि क्या शीर्षक का निर्धारण लिखने के प्रारम्भ में ही कर दिया जाए या कि फिर पहले लेखन समाप्त कर दें और अंत में लेख की सार सामग्री को ध्यान में रखकर शीर्षक दिया जाए? समस्या यह भी होती है कि शीर्षक चाहे प्रारम्भ में तय किया गया हो या फिर अंत में क्या पाठक उस शीर्षक का सबब समझ पाएंगे? लेकिन इस बार जब यह लेख लिखने बैठा हूं तो ऐसी कोई भी दुविधा दिमाग़ में नहीं आई। स्वतः ही लेखन के प्रारंभ में शीर्षक तय हो गया 'भारतीय लोकतंत्र : बढ़ते कदम''। लेख के प्रारम्भ में ही इस शीर्षक के पीछे लेखक की सोच का खुलासा करना उचित होगा।

अक्सर लेखक भारत 'में' लोकतंत्र, भारत 'का' लोकतंत्र या फिर लोकतंत्र 'और' भारत आदि शीर्षकों का प्रयोग करते हैं। इन शीर्षकों या ऐसे शीर्षकों की समस्या यह होती है कि 'लोकतंत्र' एक कृत्रिम व्यवस्था लगती है जिसे भारत ने अपनाया है और दोनों के बीच एक दूरी का बोध होता है। कुछ लेखकों ने इस समस्या से बचने के लिए 'लोकतांत्रिक भारत'

जैसे शीर्षकों का प्रयोग किया। निश्चित ही यह पहली पीढ़ी की तुलना में सुधार था पर फिर भी यह शीर्षक आभास देता था कि भारत लोकतंत्र के अलावा कुछ और भी हो सकता था।

प्रस्तुत लेख इसी दिशा में संभवतः एक कदम आगे बढ़ाने का प्रयास है। दावा यह नहीं है कि अकादमिक जगत में पहली बार 'भारतीय लोकतंत्र' शीर्षक का प्रयोग किया जा रहा है परन्तु यह अवश्य है कि यह शीर्षक दो बातें तय कर देता है—एक तो यह कि भारत लोकतंत्र के अलावा कुछ और हो ही नहीं सकता और दूसरा यह कि लोकतंत्र का एक नया स्वरूप भारत ने तय करें दिया है जिसे 'भारतीय लोकतंत्र' कहा जा सकता है। लोकतंत्र का यह स्वरूप श्वेत आंग्ल सेक्सन प्रोटेस्टेंट (White Anglo Saxon Protestant Model) स्वरूप से भिन्न है और गैर पाश्चात्य जगत के लिए एक अनुकरणीय उदाहरण है। दावा यह भी है कि जैसे-जैसे पाश्चात्य जगत में विविधताएं बढ़ेंगी वैसे-वैसे उसे भी 'भारतीय लोकतंत्र' के महत्व का आभास होगा।

यह शीर्षक इस बहस का उत्तर भी है जिसे 20वीं शताब्दी के दूसरे पड़ाव में कुछ पाश्चात्य विद्वानों और उनकी अनुकम्पा पर आश्रित भारतीय मूल के विद्वानों ने छेड़ा था। इन अकादमिक मित्रों ने लोकतंत्र के पारम्परिक मूल्यों और मापदंडों को ध्यान में रखते हुए यह अट्ठाहास किया था कि भारत में लोकतंत्र सफल हो ही नहीं सकता। उनका मानना था कि लोकतंत्र केवल ऐसे समाजों के लिए है जहां समृद्धि हो, जहां वैचारिक मतैक्य हो, जहां सामाजिक एकरूपता हो, जहां एकल धार्मिक मान्यता हो। इस सूची को और भी आगे बढ़ाया जा सकता है लेकिन यह कहना पर्याप्त होगा कि इन विद्वानों के अनुसार लोकतंत्र उन्हीं देशों के लिए उपयुक्त है जो विकसित और सजातीय हों। भारत की पहचान तो कुछ और ही थी। आर्थिक रूप से भारत गरीब, अविकसित और व्यापक विषमताओं से ग्रसित था। सामाजिक रूप से भारत की विविधताओं का कोई अंत ही नहीं था अनेक धर्म, अनेक भाषाएं, अनेक संस्कृतियां, उतनी ही जातियां-जितना खोदो उतनी ही विविधताएं। राजनीतिक स्तर पर चरम वामपंथ से लेकर चरम दक्षिणपंथियों का अखाड़ा था भारतीय राजनीति। लेकिन इस अंतहीन वैविध्य के बावजूद भी यह जिद थी कि लोकतंत्र के अलावा और कोई व्यवस्था नहीं अपनाएंगे।

लोकतांत्रिक व्यवस्था को स्थापित करने वाले संस्थापकों की यह दलील थी कि भारत में फैली प्रचुर विविधताओं को यदि कोई प्रणाली एक सूत्र में पिरो कर रख सकती है तो वह लोकतंत्र ही है। अन्य कोई भी प्रयास देश के विखंडन का कारण बनेगा। उनका यह भी मानना था कि भारत का इतिहास, यहां की दार्शनिक विरासत और यहां का भूगोल भी लोकतंत्र के अनुकूल है। सोच यह भी थी कि देश के संयमित और नियोजित विकास के लिए भी लोकतांत्रिक व्यवस्था ही उपयुक्त रहेगी। लेकिन आलोचकों को भारत में लोकतंत्र की स्थापना अनुचित ही लगी। प्रारम्भ में लोकतंत्र की शास्त्रीय परंपराओं के सांचे के लिए भारत को अनुपयुक्त बताया गया। उसके बाद यह कहा गया कि यहां के नेतृत्व में वो गुण नहीं हैं कि वे इस चुनौती का सामना कर सकें। फिर यह कहा गया कि यहां का प्रशासन असक्षम है। आर्थिक विषमताओं और व्यापक भ्रष्टाचार को दर्शाते हुए बताया गया कि भारत में लोकतंत्र एक छलावा है। 1980 के दशक में धार्मिक और जातीय उन्माद को ध्यान में रखते हुए फिर कहा गया कि अब भारत में लोकतंत्र अंतिम कगार पर है।

परंतु ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। समय बीतता रहा और हम आगे बढ़ते रहे। इस दौरान बहुत कुछ हुआ। कुछ बुरा लेकिन बहुत कुछ अच्छा। पहले संक्षेप में बुरी बातों पर नजर डालें। आर्थिक विषमता पहले भी चुनौती थी और आज भी है। जातिगत भेदभाव आज भी सामाजिक नियोजकों के लिए चिंता का विषय है। बहुसंख्यकवाद और बढ़ती धर्मान्धता हमारी संस्कृति को कुरूपित कर रही है। भ्रष्टाचार विकास के लाभ को निर्धनतम तबकों तक नहीं पहुंचने दे रहा है। आपातकाल

की विभीषिकों का एक दौर हम झेल चुके हैं। समाज और राजनीतिक में अपराधीकरण भी बढ़ रहा है। लेकिन इन नकारात्मक प्रवृत्तियों के साथ ही बहुत कुछ ऐसा हुआ है जो उल्लेखनीय है। गत 60 वर्षों में देश का राजनैतिक एकीकरण हुआ है चाहे वामपंथी हों या दक्षिण पंथी सभी लोकतंत्र की भाषा बोलते हैं। नियमित रूप से हो प्रायः स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों से लोकतंत्र के प्रति लोगों में आस्था बढ़ रही है। लोकतंत्र का नियमित अनुभव लोकतंत्र के संस्कारों को और भी मजबूती प्रदान कर रहा है। सक्रिय न्यायपालिका और सजग समाचार तंत्र ने राजनैतिक व्यवस्था पर पैनी नजर रखी हुई है। निरंतर प्रगतिशील नागरिक समाज ने सरकार व राज्य को उनकी जिम्मेदारियों का एहसास दिलाया है। मानव अधिकारों के प्रति जागरूकता और भी बढ़ी है। नीति निर्माण और नियोजन में इस बात को प्राथमिकता मिल रही है कि निर्धनतम तबकों के लिए साक्षरता, रोजगार, खाद्यान्न सुरक्षा, स्वास्थ्य आदि मौलिक सुविधाओं के लिए विशेष प्रयास किए जाए। प्रशासन में अधिकाधिक पारदर्शिता के माध्यम से भ्रष्टाचार को रोकने का प्रयास भी हो रहा है। आधुनिक संचार क्रांति के द्वारा प्रशासन और राज्य को आम लोगों के लिए अधिक सुलभ किया जा रहा है।

इन सभी सकारात्मक कदमों का परिणाम यह हुआ है कि 1990 के दशक से उन विद्वानों की वाणी पर विराम लग गया है जो भारत में लोकतंत्र को अनुपयुक्त बताते थे। अब भाषा बदल गई है। यह कहा जा रहा है कि लोकतंत्र भारत के लिए नैसर्गिक व्यवस्था है। यदि भारत लोकतंत्र नहीं अपनाता तो देश का विखंडन हो जाता। कुछ विद्वानों ने यह भी लिखा कि भारत इतना परिपक्व हो गया है कि लोकतंत्र को अपनाया तो भारत के लोकतंत्र को भी पाश्चात्य विकसित विश्व का प्रमाण पत्र मिल गया। जब चीन विश्व शक्ति के रूप में तेजी से आगे आया तो भारत में लोकतंत्र के महत्व को समझा जाने लगा। लेकिन यह स्वीकारोक्ति भी पाश्चात्य जगत के स्वार्थ का परिणाम थी। उनके स्वार्थ का जुड़ाव बढ़ते हुए भारतीय बाजार से था। वैश्वीकरण के दौर में जाहिर है एक लोकतांत्रिक बाजार का महत्व किसी भी गैर लोकतांत्रिक बाजार से अधिक है।

शीतयुद्ध के अवसान के पश्चात् अनेक देशों ने किसी न किसी रूप में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था को स्वीकार किया। कुछ विद्वानों ने इस प्रक्रिया को लोकतंत्र की तीसरी लहर की संज्ञा दी, वही कुछ अन्य विद्वानों ने शीतयुद्ध के संदर्भ में इसे साम्यवाद पर लोकतांत्रिक पूंजीवाद के विजयी दौर के रूप में उल्लेखित किया। पश्चिम के विकसित देशों ने इस नए चरण की मीमांसा करते हुए कहा कि यह उनकी जिम्मेदारी है कि विश्व भर में वे लोकतंत्र की स्थापना करें। लोकतंत्र के प्रसार के लिए जो तरीके अपनाए गए वे चाहे कुछ भी हों, लोकतांत्रिक नहीं थे। कुछ देशों में मानव अधिकारों के हनन की आड़ में हस्तक्षेप किया गया। कुछ देशों में पर्यावरण के बहाने पर दखलंदाजी की गई। कुछ अन्य देशों में आतंकवाद और प्रतिबंधित हथियारों की मौजूदगी की आड़ में सैनिक और गैर सैनिक कार्यवाही की गई। इस तरह एक के बाद एक अनेक देशों में लोकतंत्र का वस्तु के रूप में निर्यात किया जाने लगा। जिस लोकतांत्रिक ढांचे को स्थापित करने का प्रयास हुआ वह निस्संदेह ही पश्चिम ढांचा था। इस ढांचे का नव-लोकतांत्रिक देशों के समाज और आर्थिक आवश्यकताओं से कोई संबंध नहीं था। केवल चुनावों और आर्थिक निजीकरण को लोकतंत्र के मुख्य मूल्य के रूप में देखा गया। स्वाभाविक ही था कि ऐसे लोकतांत्रिक ढांचे का स्थानीय स्तर पर विरोध होने लगा। दक्षिण अमेरिका के कुछ देशों में विरोध का झंडा वामपंथियों ने उठाया, अफ्रीका के देशों में धार्मिक और जातीय उन्माद बढ़ने लगा।

भारत भी इन प्रवृत्तियों से अछूता नहीं रहा। 1980 के दशक से देश में धार्मिक कट्टरता और जातीय राजनीति का बोलबाला बढ़ने लगा। उदारीकरण की आड़ में राज्य की

जिम्मेदारियों को सीमित करने का प्रयास किया गया। यह कहा जाने लगा कि यदि प्रशासनिक अव्यवस्था और भ्रष्टाचार को दूर करना है तो बाजार के महत्व को बढ़ाना पड़ेगा। लेकिन शीघ्र ही यह समझ लिया गया कि भारत जैसे देश में लोकतंत्र और विकास का पाश्चात्य प्रारूप अनुपयुक्त है। चरमपंथी राजनैतिक नेतृत्व भी विभाजन और टूटन की राजनीति की सीमाओं को समझने लगा। यह आभास सभी को होने लगा कि राज्य के दायित्व को संकुचित कर अपेक्षित राजनैतिक परिणाम नहीं हासिल किए जा सकते हैं। राजनीति और विकास में आमजन की निर्णायक भूमिका को स्वीकार किया गया। यह स्पष्ट हो गया कि आम लोगों की और विशेषरूप से समाज के वंचित समुदायों की लोकतंत्र में विशेष आस्था है। वे लोकतांत्रिक समाज और व्यवस्था का विस्तार चाहते थे, न की उसका सिकुड़न। लोकतंत्र का वंचित समुदायों तक विस्तार और उन समुदायों की इस व्यवस्था में बढ़ती आस्था समसामयिक भारतीय लोकतंत्र की विशिष्टता है। ये समुदाय न तो राज्य के कार्य क्षेत्र को सीमित होने देंगे और न ही वैश्विक शक्तियों को भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था को नियंत्रित करने देंगे।

लेख का शीर्षक 'भारतीय लोकतंत्र : बढ़ते कदम' इस विश्वास पर रखा गया है कि हमारे लोकतंत्र की पाश्चात्य लोकतंत्र से अलग हटकर एक विशिष्ट पहचान है। अपनी तमाम विशिष्टताओं और विविधताओं के कारण और उनके परिणामस्वरूप भारत लोकतंत्र के अलावा और कुछ हो भी नहीं सकता था।

पश्चिम के विकसित राष्ट्रों के अलावा विश्व के कई देशों की सामाजिक और आर्थिक संरचना भारत जैसी ही है। उन्हें भी भारत की तरह ही अपनी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त लोकतांत्रिक ढांचे का विकास करना पड़ेगा। गत वर्ष के दौरान दक्षिण एशिया के अनेक देशों ने सैनिक शासन या राजशाही व्यवस्था को छोड़कर लोकतंत्र को स्वीकार किया है। इसके लिए भारत को न अधिक हस्तक्षेप करना पड़ा, न ही कोई सैनिक कार्यवाही की आवश्यकता पड़ी। भारतीय लोकतंत्र की खुशबू न केवल दक्षिण एशियाई उपमहाद्वीप के देशों तक फैली है अपितु अब अन्य महाद्वीपों में भी इसे सम्मान से देखा जाता है। विशेष रूप से वे क्षेत्र जहां विविधता है वहां पर यह विश्वास बढ़ा है कि वे भी भारत की भांति लोकतंत्र को स्थापित कर सकते हैं।

लोकतांत्रिक राह और मंजिल निश्चित नहीं होती है। भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना एक चुनौती थी। हमें लोकतंत्र का कोई भी पूर्वाभ्यास नहीं था। दार्शनिक स्तर पर और स्वाधीनता आंदोलन के दौरान लोकतांत्रिक विचारधारा को समर्थन प्राप्त हुआ लेकिन आज यह कहा जा सकता है कि भारत के अनुभव ने लोकतंत्र की भाषा और विचारधाराओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन किए हैं। अब यह केवल पाश्चात्य विचारधारा या व्यवस्था नहीं है। इसका भारतीयकरण हुआ है। भारतीय लोकतंत्र की एक विशिष्ट संस्कृति है। राजनीति और विशेषकर प्रतिस्पर्धात्मक चुनावी राजनीति भारतीय लोकतंत्र के विस्तार व प्रचार का मुख्य साधन है। जैसे-जैसे लोकतंत्र का अनुभव बढ़ेगा वैसे-वैसे लोगों को इसका लाभ मिलेगा और साथ ही साथ लोकतंत्र में उनकी आस्था भी बढ़ेगी। भारतीय लोकतंत्र ने लोकतंत्र से जुड़ी शास्त्रीय परंपराओं को तोड़ा है और यह सिद्ध किया है कि लोकतंत्र के रास्ते एक से अधिक हो सकते हैं। लोकतंत्र के भारतीय संस्करण ने परंपरागत समाजों और आधुनिक राज्य व्यवस्था के मध्य एक सेतु स्थापित किया है। आशा और अपेक्षा यह है कि आने वाले समय में अधिक से अधिक समाज इस सेतु का सदुपयोग करेंगे।